इकाई 4 मैसूर और हैदराबाद

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य है:

- आप यह समझ सकें कि 18वीं शताब्दी में मैसूर और हैदराबाद के राजनीतिक निर्माण की प्रक्रिया किस तरह चली,
- यह दिखाना कि यह प्रक्रिया दोनों क्षेत्रों में किस तरह अलग-अलग थी, और
- दोनों प्रक्रियाओं की भिन्नता के कारणों की तरफ इशारा करना।

4.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम आपको मुगलों का प्रभुत्व कम होने के बाद की दक्षिण भारत की स्थिति के बारे में बताएंगे। हमारा खास ध्यान मैसूर और हैदराबाद के राज्यों के उदय पर केंद्रित होगा। हम यहाँ देखेंगे कि पहले की राजनीतिक संस्थाओं के बने रहने के बावजूद गठित होने वाले राज्यतंत्रों में कुछ बुनियादी बदलाव हुए। मैसूर और हैदराबाद में ऐसा कई तरीकों से हुआ। जब हैदराबाद में मुगल राजनीतिक संस्थाएँ कमजोर पड़ गयी और उनका इस्तेमाल क्षेत्र की स्थिति को मजबूत करने के लिए होने लगा तो दूसरी तरफ मैसूर में वोडयार वंश को उखाड़ फेंका गया और उसकी जगह एक मजबूत और सुधरे प्रशासन का गठन हुआ। शुरुआत में इन दोनों ही प्रक्रियाओं ने 18वीं शताब्दी के मध्य दशकों में स्वायत्ता की स्थिति को जन्म

दिया। इस इकाई का यही विषय है। दोनों ही मामलों में, 18वीं शताब्दी का अंतिम दशक आते-आते स्वायत्तता या तो धीरे-धीरे बिखर गयी या उसे अंग्रेज़ों ने जबरन खत्म कर दिया।

4.2 मैसूर

मैसूर राज्य हैदराबाद के दक्षिण में था (देखिए मानचित्र)। 18वीं शताब्दी में, वोडयार से लेकर टीपू सुल्तान तक, मैसूर के सभी शासकों को एक ओर तो मराठों के विस्तारवाद की चुनौती का सामना करना पड़ा तो दूसरी ओर हैदराबाद और कर्नाटक के विस्तारवाद की चुनौती से निपटना पड़ा और अंग्रेज़ों ने इस स्थिति का फायदा उठाया। 18वीं शताब्दी की जो जानी-मानी हस्तियाँ थी उनमें एक टीपू सुल्तान था जो अंग्रेज़ों की बढ़ती ताकत से टक्कर लेने वाला एक लोक नायक बन गया और अंग्रेज़ उसे सत्ता हथियाने की राह का कांटा मानते थे। मैसूर को विजय नगर साम्राज्य की वाइसरायी से बदल कर वोडयार वंश ने उसे एक स्वायत्तशासी राज्य बना दिया। अब मैसूर को दक्षिण भारत में एक बड़ी ताकत के रूप में स्थापित करने का उत्तरदायित्व हैदरअली और उसके बेटे टीपू सुल्तान पर था। हैदर मामूली खानदान से था और उसके समय के उसके विरोधी अंग्रेज़ उसे अक्सर उपहारी (या, हड़प लेने वाला) कहते थे — इस बात का असर बाद के इतिहासकारों में भी देखने को मिलता है। लेकिन वह उसी मायने में उपहारी था जिस मायने में मैसूर का वह प्रधान मंत्री या दलवई उपहारी था जिसकी जगह हैदर आया था। दलवई ने नामधारी वोडयार राजा का वजूद ही शून्य कर दिया था और अपने पहले के दलवई, नंजराज की तरह हैदर ने भी राज्य की सेवा करने वाले एक कर्मचारी की हैसियत से शुरुआत की। उसने सेना को मजबूत करने, बेलगाम स्थानीय सरदारों या पोलीगरों को काबू में करने और बेदनोव, सुंडा, सेवा, कनारा और गुटी को अधीन करने में अपनी सैनिक प्रतिभा दिखायी। उसकी जीत का सबसे महान क्षण वह था जब उसने अंग्रेज़ी सेनाओं को मद्रास के अंदर पाँच मील तक खदेड़ कर 1769 में उन्हें संधि के लिए मजबूर कर दिया। आप हैदर और टीपू सुल्तान के सैनिक और राजनयिक कारनामों के बारे में विस्तार से खंड तीन में अध्ययन करेंगे। इस इकाई में हम यह अध्ययन करेंगे कि मैसूर एक बड़ी क्षेत्रीय ताकत के रूप में कैसे मजबूत और स्थापित हुआ।

4.3 युद्ध और सैन्यीकरण

युद्ध और उसके साथ सैन्यीकरण की अहमियत मैसूर के इतिहास में और भी पहले से दिखायी देती है। इतिहासकार स्टाइन के अनुसार सैन्यीकरण की परंपरा ऐतिहासिक विजयनगर साम्राज्य में 16वीं शताब्दी से देखी जा सकती है। दक्षिण भारत में सबसे पहले विजयनगर ने ही स्थानीय राजाओं और दूसरी बाहरी ताकतों पर अपना कब्जा कायम करने की गरज से आग्नेयास्त्रों (बंदूक, पिस्तौल जैसे हथियारों) का इस्तेमाल किया था।

4.3.1 स्थानीय सरदार

यह समझने के लिए कि मैसूर में बहुत पहले सैन्यीकरण क्यों जरूरी हो गया था, स्थानीय सरदारों की भूमिका को समझना अहमियत रखता है। स्थानीय सरदार, खास तौर पर, पोलीगर, जंगलों के शिकारी संग्रहकर्ता समूहों के वंशज थे जिन्होंने सैनिक कौशल हासिल कर लिया था और विजयनगर साम्राज्य की सैनिक सेवा में स्थानीय महत्व की राजनीति भी सीख ली थी। 18वीं शताब्दी आते-आते उनमें से अधिकांश ने दो मुख्य माध्यमों से ताकत हासिल कर ली थी — (क) राजस्व का कब्जा और अपनी भूमियों पर खेती से मिलने वाला अंशदान, और (ख) उनके अपने संप्रदाय के मंदिरों के पुरोहितों का समर्थन। इसके अलावा इस तथ्य ने भी इस दिशा में काम किया कि मंदिर व्यापार के केंद्र भी थे और उन्होंने स्थानीय सरदारों को ताकत हथियाने में मदद की जिससे वे मैसूर के किसी भी केंद्रीकृत राज्य के विकास

को प्रभावित कर सके। इसका यह भी अर्थ हुआ कि मैसूर और पोलीगारों के बीच ताकत और सैनिक बल का टकराव मैसूर में किसी राजतंत्र को स्थापित करने में निर्णायक कारक होता।

4.3.2 18वीं शताब्दी के प्रयास

इस टकराव की शुरुआत 18वीं शताब्दी में चिक्कदेव राजा वोडयार (1672–1704) ने की। उसके अधीन मैसूर अभूतपूर्व सैन्यीकरण की ओर बढ़ा। इस बढ़ी सैनिक क्षमता को बनाये रखने के लिए उसने राज्य के अधिकारियों के द्वारा इकट्ठे होने वाले आम राजस्व को बढ़ा दिया और उसके सैनिकों के पास जो भूमि थी उसे राजस्व करों से मुक्त कर दिया।

हैदर अली जो धीरे-धीरे मैसूर प्रशासन की सीढ़ियाँ चढ़ता ऊपर तक जा पहुँचा था, उसने अपने आपको ठीक इसी तरीके से मजबूत किया। उसने भूमि के बड़े हिस्सों को महत्वाकांक्षी योद्धाओं के हाथों नीलाम कर दिया, जिन्होंने राजस्व किसानों की हैसियत से स्थानीय सरदारों पर राजस्व लाद दिया। हैदर अली ने इन सरदारों का स्वाधीनता का कोई दावा नहीं माना और अगर किसी ने विरोध करने की कोशिश की तो उसे उसकी भूमि से ही खदेड़ दिया। इन सरदारों की गतिविधियों के क्षेत्र को सीमित करके हैदर ने फिर उनके स्थानीय प्रभुत्व को तोड़ा। उसका बेटा, टीपू सुल्तान पोलीगारों को अधीन बनाने में और भी आगे बढ़ा। उन्हें निकाल देने के बाद उसने उनकी भूमि को या तो निजी क्षेत्र के व्यक्तियों को या फिर सरकारी अधिकारियों को किराये पर उठा दिया। इसके अलावा, टीपू सुल्तान ने अपने सैनिकों को युद्ध की लूट में हिस्सा देने की जगह उन्हें नियमित तनख्वाह देनी शुरू कर दिया, जिससे यह तय हो गया कि सेना में स्थानीय सरदारों के साथ सांठ-गांठ वाला कोई स्वार्थी तत्व सर न उठा सके।

कुछ मायनों में हैदर और टीपू ने सेना के संगठन की कुछ कमजोरियों को भी खत्म करने की कोशिश की। उन्होंने संगठन में यूरोपीय ढंग से अनुशासन को और मजबूत बनाने की कोशिश की। उन्होंने संगठन में यूरोपीय ढंग से अनुशासन को और मजबूत बनाने की कोशिश की।
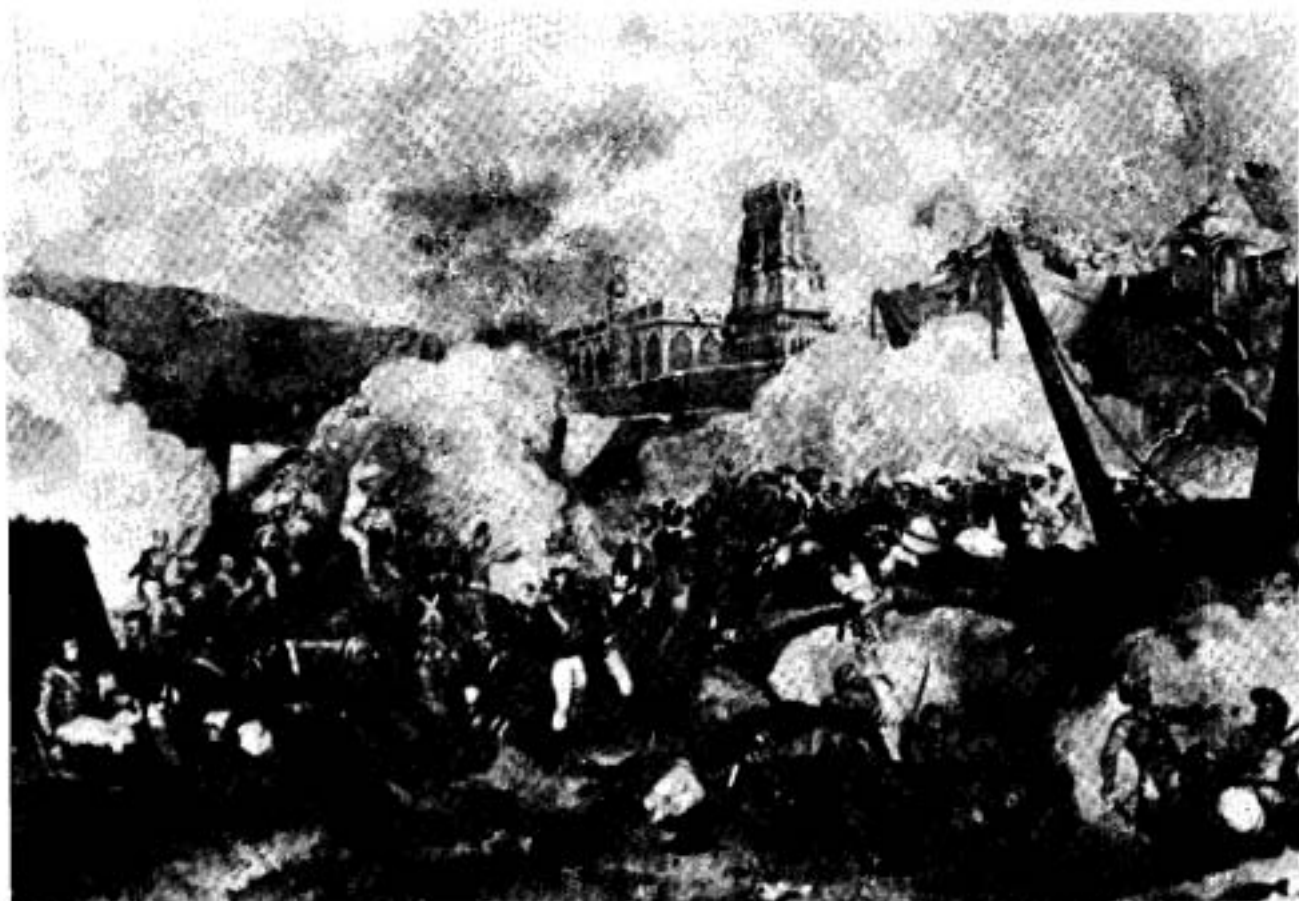
चित्र-4 युद्ध और सैन्यीकरण का एक चित्रण (श्रृंगोपट्टन की लड़ाई)

इसके लिए उन्होंने फ्रांसीसी सैनिकों की भर्ती की और उनसे सैनिकों को विशेष प्रशिक्षण देने का काम लिया। हमारे पास हैदर के अधीन फ्रांसीसी सेनापति द ला तूर की सेवा का ब्योरा उपलब्ध है, जिससे पता चलता है कि 1761 तक मैसूर सेना में फ्रांसीसी लोगों की गिनती काफी बढ़ गयी थी। इससे पैदल सेना और तोपचियों के प्रशिक्षण में मदद मिली होगी। दूसरी बात यह है कि, इससे आधुनिक यूरोपीय आग्नेयास्त्रों और तोपों के उपयोग के लिए एक माहौल भी तैयार हुआ। उपर्युक्त विचार इतिहासकार संजय सुब्रहमण्यम का है, जिन्होंने वोडयार मैसूर के युद्ध का विशेष अध्ययन किया है।

4.4 प्रशासन

हैदर और बाद में टीपू की एक और उपलब्धि थी प्रशासन के ढाँचे में मजबूती। असल में हैदर और टीपू ने वोडयारों के पुराने प्रशासन के साथ छेड़छाड़ नहीं की। उन्होंने सेना और राजस्व से लेकर सूचना तक प्रशासन के 18 विभागों को बनाये रखा। अपनी क्षमता दिखाने वाले खांडे राव, वेंकटप्पा या मीर सादिक जैसे सर्वोच्च अधिकारियों को राजनीतिक खींचतान के बावजूद साथ रखा गया। असल में रद्दोबदल उसी समय की गयी जब ऐसे बड़े अधिकारी पैसों की गड़बड़ी में पकड़े गये। ब्रिटिश प्रशासन टामस मुनरो का यह मत था कि हिंदू या मुसलमान देशी शासक के अधीन व्यक्तिगत दौलत और महत्वाकांक्षा पाने की जो गुंजाइश थी उसे देखते हुए ही समाज के कुलीन वर्गों ने कंपनी की सेवा के "विनम्र मामूलीपन" की जगह देसी शासकों के साथ जुड़ना पसंद किया।
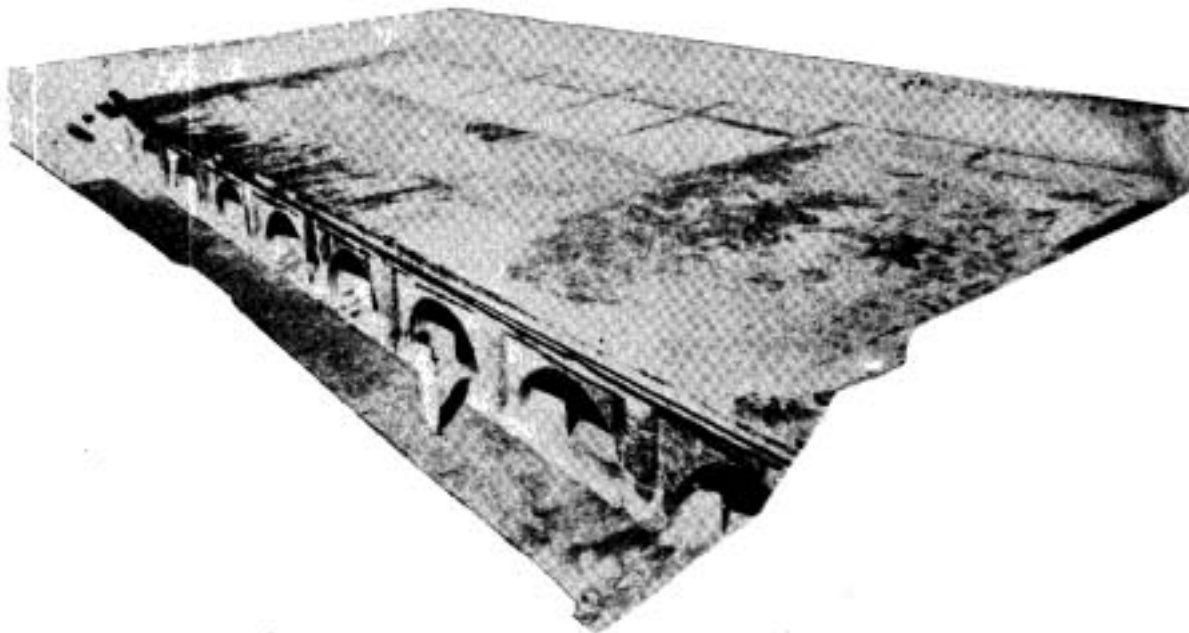
चित्र-9 श्रृंगीपट्टन का जेल

4.5 वित्त

बहरहाल, हैदर और टीपू के अधीन मैसूर प्रशासन की खास बात थी राज्य चलाने के लिए अपने वित्तीय संसाधनों में बढ़ोतरी करके अपने सैनिक राजनीतिक अधिकार का आधार तैयार करना। इसके लिए, 18वीं शताब्दी के मैसूर के वित्त और उत्पादन के दो संचालकों-व्यापारी और किसान दोनों को संभालना था।

4.5.1 भूमि से प्राप्त राजस्व

भूमि को अलग-अलग दरजों में बाँटा हुआ था और हर दरजे की भूमि के मूल्यांकन का तरीका भी अलग था। इजारा भूमि को तय किरायों पर किसानों को पट्टे पर दिया जाता था। हिस्सा भूमि पर किराया उत्पादन में हिस्से के तौर पर देना होता था। इसके अलावा सिंचित भूमि का किराया उत्पादन में हिस्से के तौर पर देना होता था और सूखी भूमि का किराया पैसों में चुकाना होता था।

भूमि को सर्वेक्षण और नियंत्रण प्रणाली के तहत रखा जाता था और खेत जोतने वालों को काफी राहत और सुरक्षा देकर उनका हौसला बढ़ाया जाता था। राज्य नियंत्रण की एक मजबूत प्रणाली बनायी गयी थी जिसमें अमलदार तो राजस्व प्रशासन को नियंत्रित करते थे और आसफदार किराये संबंधी झगड़ों के कानूनी बिंदुओं की देखभाल करते थे। बिचौलियों को खत्म करके राज्य के लिए अधिक से अधिक राजस्व बनाने के लिए राज्य के हितों और किसानों के हितों के बीच एक सीधा सूत्र बनाया गया। टीपू ने राजस्व किसानों से किसानों की रक्षा करने के लिए खास सरकारी अधिकारियों को खेती के अधिकार न देने जैसे कई उपाय किये।

टीपू की भूमि राजस्व नीति में खेती के लिए विकसित सुविधाएँ देने के लिए व्यक्तियों को खेती करने के लिये पूरी स्वायत्तता देने का प्रावधान था। ऐसे व्यक्तियों को सिंचाई तथा अन्य संबंधित कार्यों के लिये जमीन मुफ्त में दी गई। इस तरह लोगों का एक ऐसा वर्ग तैयार किया गया जो खेती के विकास को स्वतंत्र रूप से सहारा दे सकें।

परन्तु, इन उपायों से अलग पड़ी भूमि को जोतने और एक खास परिवार को हमेशा के लिए जागीर दे देने वाली, जागीर प्रणाली के कारण सफलता नहीं मिली। दूसरी ओर खेती के उत्पादन में पूरे गाँव की साझेदारी होने की प्रथा थी। जैसा कि इतिहासकार निखिलेश गुहा बताते हैं, इस प्रथा के कारण उत्पादन का बड़ा हिस्सा वर्चस्व रखने वाली या ऊँची जातियों को चला जाता था जो अधिकतर कर्मकांड करते थे। इस तरह, ऐसा कोई तरीका नहीं था जिससे कि अतिरिक्त उत्पादन का इस्तेमाल खेतिहर समुदाय में विकास का काम शुरू करने के लिए किया जा सके। परिणामस्वरूप खेतिहर के पास इतने संसाधन नहीं बच पाते थे कि खेती का विकास हो सके।

सबसे अधिक, राज्य युद्ध को प्राथमिकता देता था। सुलतानों का खास ध्यान मराठों, हैदराबाद कर्नाटक और अंग्रेज़ों पर था। इसके कारण सेना का खर्चा बेतहाशा बढ़ गया और उसके परिणामस्वरूप राजस्व की मांग बढ़ गयी। उदाहरण के लिए, टीपू ने अपनी हार के समय भूमि राजस्व में 30 प्रतिशत की बढ़ोतरी की थी। इस तरह खेती के किसी स्थायी विकास की संभावना नहीं थी और खेतिहर को और अधिक पैसा देने को मजबूर करना इस स्थिति का ऐसा परिणाम था जिसे टाला नहीं जा सकता था।

4.5.2 व्यापार से प्राप्त राजस्व

व्यापारी लोग लगभग पिछली दो शताब्दियों से मैसूर की अर्थव्यवस्था में एक अहम् भूमिका निभा रहे थे। इनमें से अहम् व्यापारियों ने अंदरूनी, बाहरी व्यापार और राजस्व खेती को एक दूसरे से जोड़ व्यापार और भूमि के इन विविध निवेशों का एक विभाग हथियाया हुआ था। राजनीतिक कार्यवाही के स्तर पर वे अक्सर सत्ताधारी शासकों के बीच अपने हितों की रक्षा करवाने के लिए मौजूद प्रथा और पारंपरिक संबंधों का इस्तेमाल करते थे। भूमि में उनका दखल काफी महत्वपूर्ण था। जैसा कि संजय सुब्रमण्यम बताते हैं, उनमें से कुछ के बड़े राजस्व किसान होने के बावजूद उनके अधीन खेती वाले इलाके में संपन्नता ही आयी, गिरावट नहीं। इससे पता चलता है कि वे भूमि को कितना महत्व देते थे और व्यापार के लाभों का भूमि में थोड़ा-थोड़ा करके आना कितना अहम् था। इस तरह संपन्न व्यापारियों की मैसूर की अर्थव्यवस्था में अहम भूमिका थी।

टीपू ने इन व्यापारियों और उनके व्यापार की अहमियत को समझा। उसने "आसफों" को नियुक्त किया कि वे अधिकारियों को प्रशिक्षित करें जिससे कि वे व्यापार को काबू में रखने के लिए टीपू के द्वारा स्थापित व्यापार केंद्रों को चला सकें।

राज्य के अधिकारियों के जमा किये हुए राजस्व से इन व्यापार केंद्रों के लिए व्यापार पूंजी उपलब्ध करानी होती थी। ऐसी व्यवस्था की गयी थी कि व्यक्ति निजी हैसियत में राज्य के व्यापार में पूंजी लगाने के लिए पैसा जमा करें जिस पर उन्हें 35 प्रतिशत का लाभ दिया जाता था। निजी व्यापारियों को यह छूट थी कि वे यहाँ आवश्यक वस्तुओं की बिक्री में हिस्सा लें, इसे राज्य के लिए फायदेमंद समझा जाता था। इन केंद्रों के हिसाब-किताब की नियमित जाँच होती थी। इसके अलावा, मुद्रा के नियमन का कठोरता से पालन होता था।

मानचित्र-5
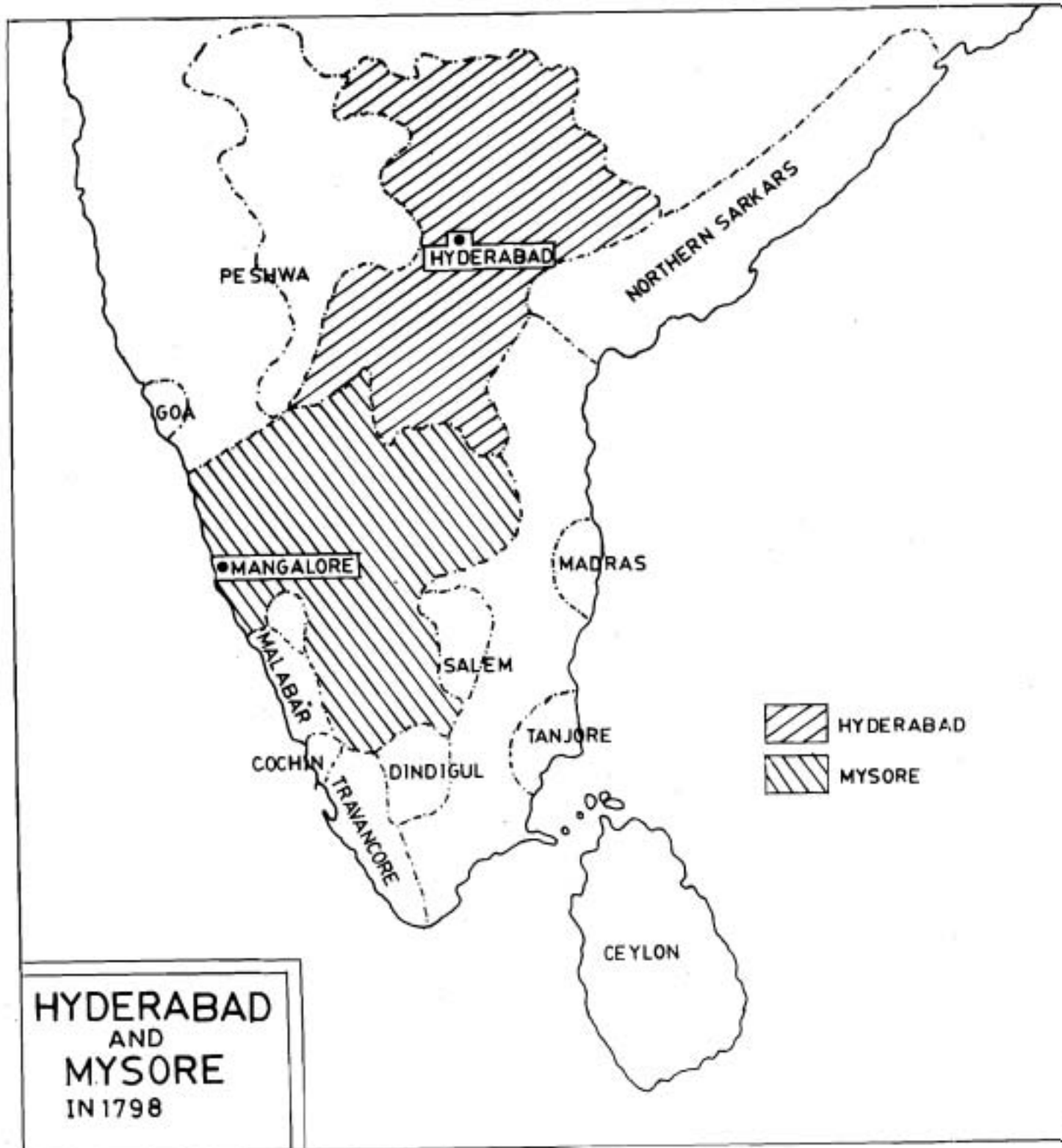
बहरहाल, ऐसा लगता है कि निजी व्यापारियों की गतिविधियों के विस्तार, या अंग्रेज़ों के संदर्भ में समुद्री व्यापार पर वर्चस्व को एक संभावी खतरे के रूप में देखा जाता था, ऐसा शायद देसी व्यापारियों और अंग्रेज़ों के बीच गठबंधन के रूप में था। 1785 में उसने अपने बंदरगाहों से काली मिर्च, चंदन और इलायची के निर्यात पर पाबंदी लगा दी। 1788 में उसने अंग्रेज़ों के साथ व्यापार करने की साफ मनाही कर दी।

संक्षेप में, 18वीं शताब्दी में मैसूर एक ऐसा राज्यतंत्र था जो हैदर और टीपू की सैनिक ताकत के द्वारा मजबूत तो हुआ लेकिन उन पर इस बात का लगातार दबाव रहा कि वे सैनिक शक्ति के कारण काबू में आयी ताकतों का कोई स्थायी हल निकालने में समर्थ नहीं थे। इसके परिणामस्वरूप हमने देखा कि राज्यतंत्र के भीतर के व्यक्तियों में खुद राज्यतंत्र की कीमत पर अपना निजी फायदा करने की कैसी संभावनाएँ बनीं।

बोध प्रश्न 1

सही उत्तर पर निशान लगायें।

1) टीपू के अधीन स्थानीय सरदार

   क) खुलेआम अपने अधिकारों का इस्तेमाल कर रहे थे

   ख) पूरी तरह से काबू में रखे जाते थे

   ग) कभी रहे ही नहीं

   घ) (क) और (ग) दोनों

2) युद्ध

   क) मैसूर राज्यतंत्र की कार्यसूची से पूरी तरह से गायब था।

   ख) मैसूर राज्यतंत्र स्थापित करने की तरकीबों का एक अहम् हिस्सा था।

   ग) 18वीं शताब्दी में मैसूर राज्य और स्थानीय सरदारों के बीच शक्ति संतुलन को निर्धारित करता था।

   घ) (ख) और (ग) दोनों

3) टीपू के अधीन भू-राजस्व

   क) मुख्य तौर पर राजस्व किसानों के माध्यम से इकट्ठा किया जाता था।

   ख) मुख्य तौर पर टीपू द्वारा नियुक्त सरकारी अधिकारी इकट्ठा करते थे।

   ग) बिचौलिये इकट्ठा करते थे।

   घ) सुल्तान के हाथों में नहीं जाने दिया जाता था।

4) मैसूर में व्यापारियों के लाभ

   क) कृषि विकास में लगाये जाते थे

   ख) कृषि में कभी नहीं आते थे

   ग) मुख्य तौर पर उद्योग में लगा दिये जाते थे

   घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं।

4.6 हैदराबाद

ऐसा लगता है कि हैदराबाद के राज्यतंत्र ने मैसूर के राज्यतंत्र से अलग किस्म के ढाँचे को अपनाया। यहाँ शुरू के दिनों में मुगल प्रभाव कहीं अधिक मुखर था। आमतौर पर मुगल साम्राज्य के दिनों में दक्कन के सूबेदार को हैदराबाद में नियुक्त किया जाता था। यहाँ पर मुगल प्रशासन प्रणाली को लागू करने का प्रयास किया गया। लगातार मुगल मराठा टकराव और अंदरूनी तनाव के बावजूद इस प्रणाली ने दक्कन में मुगल साम्राज्य की व्यवस्था को

मुखर किया। परंतु मुगल साम्राज्य के पतन के परिणामस्वरूप यह प्रणाली संकट में पड़ गयी थी।

निजाम आसफ ma को मुगल सम्राट ने 1713 में पहले सूबेदार (प्रांत का प्रभारी) बनाया। लेकिन 1724 में अपने प्रतिद्वंद्वी मुगल नियोक्ता पर सैनिक विजय के बाद ही उसके हाथ में दक्कन की बागडोर असरदार ढंग से आ सकी। इस दौर के बाद वह दक्कन में ही बना रहा और अपने नियुक्त किये हुए प्रभारी को यहाँ छोड़कर ही वह मुगल दरबार में गया। उसके बाद उसने हैदराबाद से मुगल अधिकारियों को हटा दिया और उनकी जगह अपने आदमी बिठा दिये। उसने संधि करने, युद्ध करने और मंसब और खिताब देने के अधिकार भी अपने हाथ में ले लिये। अब धीरे-धीरे मुगल अधिकार कुतबा पढ़ने आदि तक ही सीमित रह गया। निजाम अली खां (1762–1803) के समय तक आते-आते कर्नाटक मराठे और मैसूर सभी ने अपने जमीन के दावों को सुलझा लिया था और हैदराबाद में एक किस्म का स्थिर राजनीतिक ढांचा उभर आया था

युद्ध और सेना

और जगहों की तरह ही, हैदराबाद में उभरने वाले राज्यतंत्र का एक अहम अंग सेना ही थी। निजामुल-मुल्क ने मौजूदा जागीरदारियों को बने रहने देने की नीति ही अपनायी। सेनापति और उनके सैनिक अपने निजी नियोक्ताओं, खासतौर पर सामंतों के जरिये राजनीतिक व्यवस्था से बंधे थे। यहां की स्थिति मैसूर से इस मायने में अलग थी कि यहाँ (हैदराबाद में) स्थानीय सरदारों के अधिकारों को ज्यों का त्यों बना रहने दिया गया। मुगल सेना की तरह, हैदराबाद की सेना का रख-रखाव भी निजाम के खजाने में सामंतों द्वारा लिये गये नकद भत्तों से किया जाता था।

सेना की मराठा, कर्नाटक नवाब, मैसूर या अंग्रेजों को अंकुश में रखने में महत्वपूर्ण भूमिका थी। हालांकि ऐसा मैसूर में नहीं था, फिर भी हैदराबाद में राज्य के वित्त को सीधा-सीधा युद्ध में लगाने के लिये तैयार करने के प्रयास मैसूर के मुकाबले निश्चित रूप से कमजोर दिखायी देते हैं। आइये हम वित्त के मुख्य साधन —भूमि राजस्व प्रणाली की ओर ध्यान दें और देखें कि क्या राज्य के लिये राजस्व इकट्ठा करने में सचमुच फर्क था।

4.7 भू-राजस्व प्रणाली

हैदराबाद की भू-राजस्व प्रणाली मैसूर की भू-राजस्व प्रणाली से इस मायने में फर्क थी कि टीपू और हैदर ने तो राजस्व पर एक बड़ी नौकरशाही के जरिये सीधे काबू करने की कोशिश की थी, लेकिन हैदराबाद के शासकों ने यह काम बिचौलियों को करने दिया।

इतिहासकार एम. ए. नईम ने इजारा या राजस्व खेती भूमि के वजूद की बात कही है। दूसरे, तमाम ऐसे पेशकश जमींदार थे जिनकी भूमि का सरकारी तौर पर मूल्यांकन नहीं होता था लेकिन उन्हें अपने ही मूल्यांकन खातों के हिसाब से एक सालाना अंशदान या "पेशकश" देनी होती थी। तीसरे, नईम के अनुसार, जहाँ जमींदारों और देशपांडे (गांव प्रधानों) को राज्य के मूल्यांकन के आधार पर भू-राजस्व देना होता था, वहाँ भी उनकी सहमति ली जाती थी।

राजस्व के लिये यह तो समझा जाता था कि यह उत्पादन का 50 प्रतिशत होना चाहिए, लेकिन ऐसा बहुत कम ही होता था कि इस अनुपात में राजस्व इकट्ठा हो। राज्य और भू-राजस्व दाताओं के बीच बिचौलियों का महत्व इस तथ्य से पता चलता है कि राज्य की इकट्ठा हुई रकम, या "जमांबंदी" जमींदार की सहमति से तय हुई मूल्यांकन की रकम, या "कामिल" से हमेशा कम होती थी। जैसा कि नईम ने लिखा है, इन दोनों, कामिल और जमा के बीच का फर्क जमींदार का हिस्सा होता था। निजाम काल के राजस्व संबंधी दस्तावेजों से "हम यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि वास्तविक राजस्व में भी गिरावट आयी।"

हैदराबाद में जागीरें या राज्य की सेवा के लिये मिलने वाली भूमि पुश्तैनी होती थी। मैसूर में तो इस पर रोक लगाने की कोशिश हुई, लेकिन हैदराबाद में इसके लिये कोई गंभीर उपाय

किये गये नहीं लगते। यही नहीं, जागीरदार पुश्तैनी विरासत का फायदा उठाते हुए इतने मजबूत हो गये कि वास्तविक राजस्व में गिरावट आने के संदर्भ में भी इस बात का कोई सवाल ही नहीं उठता कि जागीरदारों को जो रकम सचमुच मिलनी चाहिये, उनकी जागीरों से उन्हें मिलने वाल राजस्व उससे कम हो।

हैदराबाद के भू-राजस्व प्रशासन में आमिलों (प्रांतीय प्रधानों) के नीचे अधिकारी होते थे। नियमित मूल्यांकन और सर्वेक्षण के उपाय किये जाते थे। खेती करने वालों का राज्य की कर्ज और मोहलत की नीति के जरिये हौसला बढ़ाया जाता था।

मगर, ये सभी संभावनायें बिचौलियों की ताकत और अहमियत ने खत्म कर दी। हमने ऊपर देखा कि उनकी भूमिका राजस्व के मूल्यांकन और जमा करने में निर्णायक थीं।

इसका निज़ामों के अधीन हैदराबाद के राज्यतंत्र के बनने पर महत्त्वपूर्ण असर पड़ना था। लगता है वहाँ बिचौलिये स्वार्थों का एक ऐसा तंत्र (नेटवर्क) मौजूद था जो सर्वोच्च स्तर पर ताकत और असर के लिये चलने वाली होड़ के लिये राजनीतिक आधार बन सकता था।

4.8 संरक्षक और उनके आश्रित

इतिहासकार कैरेन लियोनार्ड हैदराबाद की राजनीतिक व्यवस्था में शिथिल "संरक्षक-आश्रित संबंध" की बात बताती है। वह मुख्य संरक्षक निज़ाम और शक्तिशाली सामंतों को बताती है। निज़ाम तो अपनी पकड़ बनाये रखते थे, जबकि उनके गिर्द सामंतों का घेरा समय-समय पर बदलता रहता था। निज़ाम के काल में सामंतों को अपने काम में आगे बढ़ने के लिये कोई एक-सा मानदंड नहीं था, जैसा कि मुगलों के अधीन होता था। निज़ाम के साथ व्यक्तिगत संबंध या सैनिक कौशलों को अहमियत मिल रही थी। इसलिये हैदराबाद में शक्तिशाली बनने के लिये मंसबों ने (जैसा कि मुगलों की व्यवस्था में था) सामंतों के उदय को नहीं रोका। बहुत से ऐसे जमींदार या जागीरदार जो अपने पीछे छोटे बिचौलियों को लेकर चल सकते थे, थोड़े से सैनिक कौशल और कूटनीति के बल पर शक्तिशाली हो गये।

इससे पहले मुगलों के औपचारिक भू-राजस्व नियमों और व्यवस्थित प्रशासनिक स्तरीकरण के कारण शक्ति और दौलत बनाने की गुंजाइश सीमित ही रही। लेकिन अब संस्था का ढाँचा इतना कमजोर था कि शीर्ष पर राजनीतिक दावों को सीधे-सीधे हथियाया जा सकता था।

वकील

शक्ति और दौलत हथियाने की इस प्रक्रिया को "वकील" कहलाने वाले बिचौलियों का एक और तंत्र मदद पहुँचा रहा था। ये "वकील" निज़ाम और सामंतों के बीच, सामंतों और सामंतों के बीच, और निज़ाम और बाहरी ताकतों के बीच दलालों का काम करते थे। वकील हैदराबादी सामंतों द्वारा संचालित विशाल और पैसे वाली संस्थाओं में व्यक्तियों [illegible] िये सुअवसरों की भी व्यवस्था करते थे।

ये वकील आमतौर पर व्यक्तियों के स्वार्थों के आधार पर काम करते थे और वहाँ तक शक्तिशाली थे जहाँ तक उनके संरक्षक शक्तिशाली थे। इसी के साथ, व्यक्तिगत लाभ के लिये निष्ठा तथा संरक्षण बदल लेना आम बात थी। उस माहौल में जहाँ काम को आगे बढ़ाने के लिये कोई एक-सा मापदंड नहीं था, ये वकील शक्ति और दौलत के लिये चलने वाली होड़ में व्यक्तिगत लाभ के लिये कार्य करने वाली शक्तियों के प्रतिनिधि थे।

4.9 स्थानीय सरदार

मैसूर की स्थिति के विपरीत, निज़ाम के अधीन स्थानीय सरदारों ने निज़ाम को अंशदान देने के बाद अपनी पुश्तैनी भूमि पर कब्जा जारी रखा। उन्होंने निज़ामों और उसके सामंतों जैसे

संरक्षकों की भूमिका तो निभायी, लेकिन उन्हें हैदराबाद की राजनीतिक व्यवस्था में कभी पूरी तौर पर मिलाया नहीं गया। न ही उनके वकीलों ने दूसरे शासकों के साथ संबंध बनाये रखे। स्थानीय सरदारों ने हैदराबाद दरबार की जीवन शैली को भी नहीं अपनाया और दरबार की राजनीतिक के दायरे से बाहर रहने में ही संतुष्ट रहे। लेकिन जब हैदराबाद दरबार कमजोर हो गया उस समय वे अपनी व्यक्तिगत क्षमता में निर्णायक कारक बने रहे।

4.10 वित्तीय और सैनिक समूह

साहूकारों, महाजनों और सेनापतियों (आम तौर पर भाड़े के) ने हैदराबाद की राजनीतिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वे प्रमुख भूमिका निभाते थे क्योंकि वे आवश्यक वित्तीय और सैनिक सेवा प्रदान करते थे। उनकी शक्ति का स्रोत उनका सम्प्रदाय था और वकीलों के विपरीत वे जाति अथवा सम्प्रदाय के समूहों की तरह काम करते थे। वित्तीय समूहों में कुछ मुख्य सम्प्रदाय या जाति समूह अग्रवाल और मारवाड़ी थे जबकि अफगान और अरब प्रमुख सैनिक समूह थे। समर्थन और सेवाएँ वापस लेने की धमकी देकर ये व्यक्ति और समूह अपने स्तर पर राज्यतंत्र के संतुलन में एक अहम् भूमिका निभाने की स्थिति में थे।

4.11 प्रशासनिक प्रणाली

प्रशासनिक प्रणाली हैदराबाद राज्यतंत्र के दूसरे पहलुओं की प्रवृत्ति का अनुसरण करती दिखती है। पहले की मुगल संस्थाएँ प्रकट में व्यक्तियों को लाभ कमाने की छूट देने की प्रक्रिया में लगी रहीं, लेकिन अब उन्होंने निहित स्वार्थों को मज़बूत करने की भी छूट दे दी। सबसे अच्छा उदाहरण दीवान के पद का है जो राज्य के अधिकतर रोज़मर्रा के मामलों को चलाता था। यहाँ दीवान की जगह दफ्तरदारों का मातहत पुश्तैनी पद कहीं अधिक अहम् हो गया। राजस्व जैसे मामलों को चलाने के लिए वेतनभोगी अधिकारियों के न होने की स्थिति में, ये दीवान स्थानीय देशपांडे या तालुकदार के द्वारा रकम निश्चित करके और उसे खाते में दर्ज करके, सही निर्धारण कर पाने में समर्थ थे। इस तरह से उन्हें काफी दौलत बना लेने का मौका भी मिल जाता था।

बोध प्रश्न 2

सही ✓ पर निशान लगायें।

1) हैदराबाद में इकट्ठा होने वाले राजस्व की रकम
   - क) का फैसला दीवान करता था।
   - ख) का फैसला निजाम करता था।
   - ग) का फैसला देशपांडे या स्थानीय बिचौलियों की सहमति से दफ्तरदार करते थे।
   - घ) का फैसला जनता करती थी।

2) हैदराबाद के वकील
   - क) प्रमुख व्यापारी थे।
   - ख) प्रमुख सैनिक थे।
   - ग) प्रमुख कलाकार थे।
   - घ) बुनियादी तौर पर ताकत और प्रभाव के विभिन्न केन्द्रों के बीच के दलाल थे।

3) हैदराबाद के निज़ाम का शासन 1724 के बाद
   - क) पूरे तौर पर मुगलों के अधीन था।

ख) केवल नाम के लिये मुगलों के अधीन था।

ग) पूरे तौर पर फ्रांसीसियों के अधीन था।

घ) पूरे तौर पर पुर्तगालियों के अधीन था।

4) हैदराबाद में स्थानीय सरदार

क) पूरी तरह से निज़ाम के अधीन थे।

ख) अपनी-अपनी जगह शासक रहे।

ग) कभी रहे ही नहीं।

घ) ख) और ग) दोनों।

4.12 सारांश

इस इकाई में हमने देखा कि मैसूर के राज्यतंत्र में किस तरह उन संस्थाओं में जो कमज़ोर ढंग से स्थापित हुई थीं या कमज़ोर हो रही थीं तमाम बिचौलिये तथा अन्य व्यक्ति राज्यतंत्र के विभिन्न स्तरों पर निर्णायक भूमिका निभा रहे थे। इस प्रक्रिया में मैसूर एक ऐसे राज्य के रूप में उभरा जो कुछ अर्थों में हैदर और टीपू की सैनिक शक्ति के ज़रिए एक मज़बूत प्रशासन कायम करके उनके संस्थात्मक आधार की कमज़ोरियों को दूर करने में कामयाब रहा। इससे कुछ हद तक कुछ व्यक्तियों और ताकतों पर पाबंदी तो लग गई लेकिन वे खत्म बिल्कुल नहीं हुई। दूसरी ओर, हैदराबाद में प्रशासन के अंदर स्वार्थी तत्वों को मज़बूत हो जाने दिया और ऊपर से नीचे तक 'संरक्षण-आश्रितों' के सम्पर्कों से अपने राजतंत्र को कायम किया।

4.13 शब्दावली

विभाग निवेश: इस इकाई में विभाग निवेश व्यापारी पूंजीपतियों के द्वारा किए निवेश की विविधता को जताता है।

राजस्व किसान: ऐसे व्यक्ति जिन्हें कोई शासक राज्य की मांग के अनुसार एक निर्धारित राजस्व के बदले में खेती योग्य भूमि देता है।

संरक्षक: ऐसा व्यक्ति जो अपनी हैसियत या असर के कारण किसी को कुछ भला कर सकता है। आश्रित वह है जिसका यह भला किया जाता है और जो संरक्षक की कुछ सेवा करता है।

कुतबा: सम्राट के लिए प्रार्थना।

4.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) ख), 2) घ), 3) ख), 4)क)

बोध प्रश्न 2

1) ग), 2) घ), 3)ख), 4) ख)